महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बिहार

मानविकी एवं भाषासंकाय

संस्कृत विभाग

एम. ए. द्वितीय सत्र

विषय - ध्वन्यालोक (प्रथम उद्योत)

Code – SNKT2003

उपविषय – ध्वनि विरोधियों के मत तथा वाच्य से प्रतीयमान अर्थ का भेद

विश्वजित् वर्मन
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय

उपक्रम

सभी कलाओं में काव्य एक उत्कृष्ट कला है। प्राचीन काल से ही आलङ्कारिकों ने काव्य के लक्षण को प्रतिपदित करने का प्रयास किया हैं। उनमें कुछ लोग शब्द को, कुछ शब्द और अर्थ को, कुछ रस को, कुछ ध्वनि को, कुछ रीति को तथा कुछ ने औचित्य को ही काव्य का प्रधान तत्त्व माना हैं।

काव्य लक्षण (भिन्न दृष्टिकोणों के आधार पर)

काव्य का शरीर

1. दण्डी- शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली।
2. भामह- शब्दार्थशरीरं तावत् काव्यम्।

काव्य का आत्मा

3. वामन- रीतिरात्मा काव्यस्य।
4. आनन्दवर्धन- काव्यस्यात्मा ध्वनिः।

रस ही काव्य

5. विश्वनाथ - वाक्यं रसात्मकं काव्यम्।

शब्द ही काव्य

6. जगन्नाथ - रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्।

शब्द और अर्थ काव्य

7. रूद्रट - ननु शब्दार्थौ काव्यम्।
8. मम्मट – तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि।
9. कुन्तक - शब्दार्थौ सहितौ वक्रकविव्यापारशालिनी।
   बन्धे व्यवस्थितौ काव्यं तद्विदाह्लादकारिणी॥

इन्ही काव्य लक्षणों को आधार करके संस्कृत अलङ्कार शास्त्र में छ प्रसिद्ध सम्प्रदायों का प्रादुर्भाव हुआ हैं।

अलङ्कार शास्त्र के छ सम्प्रदायें

सम्प्रदाय	प्रवर्तक आचार्य	प्रमुख ग्रन्थ	समय
रस सम्प्रदाय	भरत	नाट्यशास्त्र	इ.पु - 200
अलङ्कार सम्प्रदाय	भामह	काव्यालङ्कार	इ. 500
रीति सम्प्रदाय	वामन	काव्यालङ्कारसूत्रवृत्ति	इ. 800
ध्वनि सम्प्रदाय	आनन्दवर्धन	ध्वन्यालोक	इ. 800-900
वक्रोक्ति सम्प्रदाय	कुन्तक	वक्तोक्तिजीवित	इ.1000
औचित्य सम्प्रदाय	क्षेमेन्द्र	औचित्यविचारचर्चा	इ 1066

आनन्दवर्धन का परिचय

आनन्दवर्धन काश्मीर के निवासी थे। कल्हन के राजतरङ्गिणी के अनुसार ये काश्मीर के राजा अवन्तिवर्मन (इ. 855-883) के राजसभा में सभापण्डित थे।

मुक्ताकणः शिवस्वामी कविरानन्दवर्धनः।
प्रथां रत्नकरश्चागात् साम्राज्येऽवन्तिवर्मणः॥ राजतरङ्गिणी – 5.43

इसलिए विद्वानों ने आनन्दवर्धन का समय नवम शतक माना हैं। आनन्दवर्धन के पिताजी के नाम नोण (नोणोपाध्याय) है। वे स्वयं देवीशतक में लिखते हैं-

देव्या स्वप्नोद्गमादिष्टदेवीशकसंज्ञया।
देशीतानुपमामाद्धदते नोणसुतो नुतिम्॥

प्रकाण्ड विद्वान् आनन्दवर्धन ने ध्वन्यालोक नामक ग्रन्थ की रचना की इसकी पुष्टि जल्हण के सुक्तिमुक्तावली से होती है-

ध्वनिनातिगभीरेण काव्यतत्त्वनिवेशिना।
आनन्दवर्धनः कस्य नासीदानन्दवर्धनः॥

ध्वन्यालोक - ग्रन्थ परिचय

ध्वन्यालोक-

साहित्यशास्त्र के युगप्रवर्तक आचार्य आनन्दवर्धन ने ध्वन्यालोक ग्रन्थ को चार उद्योतों में वांटा। तथा उसी में अपने ध्वनि सिद्धान्त की प्रतिष्ठापना की।

<u>उद्योत भेद से ग्रन्थ का विषय</u>

प्रथम उद्योत	--	व्यञ्जनाव्यपार के द्वारा ध्वनि का निरुपण
द्वितीय उद्योत	--	व्यङ्ग्य के द्वारा ध्वनि का निरुपण
तृतीय उद्योत	--	व्यञ्जक के द्वारा ध्वनि का निरुपण
चतुर्थ उद्योत	--	काव्य के द्वारा ध्वनि का निरुपण

इसमे तीन अंश है -

1. मूल कारिका अंश	आनन्दवर्धन के स्वकीया रचना
2. वृत्ति एवं परिकरश्लोक अंश	आनन्दवर्धन के स्वकीया रचना
3. उदाहरण श्लोक अंश	विषमवाणलीला आदि ग्रन्थों से उद्धृत

विषय क्रम

1. मङ्गलाचरण।
2. प्रतिज्ञावाक्य तथा अभाववादियों का मत।
3. सहृदयश्लाघ्य अर्थ ही काव्य का आत्मा।
4. वाच्य से प्रतीयमान अर्थ का भेद निरूपण।
5. प्रतीयमान अर्थ के द्वारा वस्तु ध्वनि प्रतिपादन।

क. वाच्य विधिरूप और प्रतीयमान प्रतिषेधरूप।
ख. वाच्य प्रतिषेधरूप और प्रतीयमान विधिरूप।
ग. वाच्य विधिरूप और प्रतीयमान अनुभयरूप (न विधिरूप न ही प्रतिषेधरूप)।
घ. वाच्य प्रतिषेधरूप और प्रतीयमान अर्थ अनुभयरूप (न विधिरूप न ही प्रतिषेधरूप)।
ङ. वाच्य एक विषय और प्रतीयमान अनेक विषय।

1. मङ्गलाचरण

स्वेच्छाकेसरिणः स्वच्छस्वच्छायायासितेन्दवः।
त्रायन्तां वो मधुरिपोः प्रपन्नार्तिच्छिदो नखाः॥

अन्वय-
स्वेच्छाकेसरिणः मधुरिपोः स्वच्छस्वच्छायासितेन्दव प्रपन्नार्तिच्छिदो नखाः वः त्रायन्ताम्।

अर्थ-
अपनी इच्छा से केशरी रूप धारण किये हुए भगवान मधुरिपु, जो अपनी स्वच्छ छाया से इन्दु को आयासित करने वाले हैं तथा प्रपन्न जनों की आर्ति का छेदन करते हैं वे अपने नख से आप लोगों की रक्षा करें।

इस पद्य में तीन प्रकार ध्वनि

वस्तुध्वनि - प्रपन्नार्तिच्छिदः इस पद से
अलङ्कार ध्वनि - स्वच्छस्वच्छायायासितेन्दवः इस पद से
रसध्वनि - त्रायन्ताम् इस पद से

अलङ्कार

व्यातिरेक अलङ्कार- चाँद से नखों का उत्कृष्टता के कारण
उत्प्रेक्षा अलङ्कार- चाँद का आयासित होने के कारण
अपह्नुति अलङ्कार- नखों को चन्द्र रूप से वर्णन होने पर

रस

वीर रस- (मधुरिपोः, त्रायन्ताम्)

छन्द

आर्या छन्द

2. प्रतिज्ञावाक्य तथा ध्वनि विरोधियों के मत

काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति बुधैर्यः समाम्नातपूर्व
स्तस्याभावं जगदुरपरे भाक्तमाहुस्तमन्ये।
केचिद्वाचां स्थितमविषये तत्त्वमूचुस्तदीयं
तेन ब्रूमः सहृदयमनःप्रीतये तत्स्वरूपम् ॥

अन्वय-

काव्यस्यात्मा ध्वनिः इति बुधैः यः समाम्नातपूर्वः अपरे तस्य अभावं जगदुः। अन्ये तम् भाक्तम् आहुः। केचित् तदीयं तत्त्वम् वाचाम् अविषये स्थितम् ऊचुः। तेन सहृदयमनःप्रीतये तत्स्वरूपं ब्रूमः।

अर्थ-

काव्य का आत्मा ध्वनि यह ग्रन्थ का प्रतिज्ञा वाक्य है, जिसको विद्वानों ने पहले से ही समाम्नात (प्रकटित) किया हैं। कुछ लोगों ने उस ध्वनि का अभाव माना हैं। अन्य कुछ लोगों ने उस ध्वनि तत्त्व को भाक्त कहा हैं। दूसरे कुछ लोगों ने उस ध्वनि के तत्त्व को वाणी से अवर्णनीय बतलाते हुए खण्डन किया हैं। इसलिए सहृदय जनों के मन को आह्लादित करने के लिए ध्वनि का स्वरूप प्रतिपादन करते हैं।

ध्वनि विरोधियों का मत

अभाववाद

अभाववादियों का तीन पक्ष

प्रथम पक्ष – अलङ्कार, गुण, वृत्ति, रीति आदि से अतिरिक्त ध्वनि नाम का कुछ नहीं है।

द्वितीय पक्ष – ध्वनि नहीं है। प्रसिद्ध प्रस्थान से अतिरिक्त काव्य को स्वीकार करेंगे तो काव्यत्व की हानि होगी।

तृतीय पक्ष – काव्य के शोभावर्धक तत्त्व में ही ध्वनि अन्तर्भूत है।

भाक्तवाद

ध्वनि अमुख्य वृत्ति अर्थात् लक्षणा में अन्तर्भुत होता है। इसलिए नाममात्र उल्लेख करके ध्वनि का वर्णन नहीं किया जा सकता।

अनिर्वचनीयवाद

ध्वनि अवर्णनीय है, अर्थात् ध्वनि के तत्त्व को वाणी से प्रकाशित नहीं किया जा सकता। जिसको वाणी से प्रकाशित नहीं किया जा सकता उसको स्वीकार करने में क्या लाभ है।

3. सहृदयश्लाघ्य अर्थ ही काव्य का आत्मा

अर्थ

वाच्य अर्थ ⟷ प्रतीयमान अर्थ

योऽर्थः सहृदयश्लाघ्यः काव्यात्मेति व्यवस्थितः।

वाच्यप्रतीयमानाख्यौ तस्य भेदावुभौ स्मृतौ॥

अन्वय-

यः अर्थः तस्य वाच्यप्रतीयमानाख्यौ उभौ भेदौ स्मृतौ, (तयोः) यः सहृदयश्लाघ्यः (सः) काव्यस्य आत्मा इति व्यवस्थितः।

अर्थ-

अर्थ के दो प्रकार है वाच्य और प्रतीयमान। उनमें जो अर्थ सहृदय जनों के द्वरा प्रसंशित है वहीं काव्य की आत्मा है।

वाच्य अर्थ		प्रतीयमान अर्थ
मुख्य व्यपार (अभिधा)	⟵ व्यपार ⟶	अमुख्य व्यपार (व्यञ्जना)

4. वाच्य से प्रतीयमान अर्थ का भेद निरुपण

प्रतीयमानं पुनरन्यदेव वस्त्वस्ति वाणीषु महाकवीनाम्।
यत्तत्प्रसिद्धावयवातिरिक्तं विभाति लावण्यमिवाङ्गनासु॥

अन्वय - पुनः यत् महाकवीनां वाणीषु प्रतीयमानम् अस्ति तत् अङ्गनासु प्रसिद्धावयवातिरिक्तं लावण्यम् इव विभाति।

अर्थ- महाकवियों के वचनों में प्रतीयमान कुछ और ही वस्तु है, जो कि स्त्रियों के प्रसिद्ध अवयवों से अतिरिक्त लावण्य की भाँती भासित होता है।

जैसे किसी अङ्गना के रमणीय शरीर में मुख, नासिका, कपोल आदि अवयव के अतिरिक्त एक अपूर्व लावण्य सौन्दर्य जैसा प्रतीत होता है। वैसे ही प्रतीयमान अर्थ काव्य में वस्तु, अलङ्कार, रस आदि से आक्षिप्त होकर वाच्य से भिन्नरूप में प्रतीत होता है।

5. प्रतीयमान अर्थ के द्वारा वस्तु ध्वनि प्रतिपादन

i. वाच्य विधिरूप और प्रतीयमान प्रतिषेधरूप
ii. वाच्य प्रतिषेधरूप और प्रतीयमान विधिरूप
iii. वाच्य विधिरूप और प्रतीयमान अनुभयरूप (न विधिरूप न ही प्रतिषेधरूप)
iv. वाच्य प्रतिषेधरूप और प्रतीयमान अर्थ अनुभयरूप (न विधिरूप न ही प्रतिषेधरूप)
v. वाच्य एक विषय और प्रतीयमान अनेक विषय

क. वाच्य विधिरूप और प्रतीयमान प्रतिषेधरूप

भ्रम धार्मिक ! विस्त्रब्धः स शुनकोऽद्य मारितस्तेन।
गोदावरीनदीकूललतागहनवासिना दृप्तसिंहेन॥

अर्थ-

हे धार्मिक ! आप निर्भय होकर भ्रमण करो क्योंकि गोदावरी नदी के तट में निवास करता हुआ दृप्तसिंह ने जिस कुत्ते से आप बहुत डरते थे उसे मार दिया।

इस पद्य में 'भ्रम' (भ्रमण करो) इस विधिरूप वाच्यार्थ से भ्रमण न करो इस निषेधरूप प्रतीयमानार्थ का ज्ञान होता है। इसका कारण है सिंह का उपस्थिति। जो धार्मिक कुत्ते से डरता है, वो क्या कुत्ता से बलवान तथा नरभक्षी दृप्तसिंह से नहीं डरेगा ? इस स्थिति में क्या वो धार्मिक स्वच्छन्दता से भ्रमण करने के लिए तैयार होगा ? अर्थात् नायिका के कहने का आशय ये है कि धार्मिक यह भ्रमण न करें। इसलिए साक्षात् निषेध न करके विधिरूप से प्रकाशित किया गया है। यह वाच्य विधिरूप और प्रतीयमान अर्थ निषेधरूप है।

ख. वाच्य प्रतिषेधरूप और प्रतीयमान विधिरूप

श्वश्रूरत्र शेते अथवा निमज्जति अत्राहं दिवसकं प्रलोकय।
मा पथिक रात्र्यन्ध शय्यायामावयोः शयिष्ठाः॥

यहा पर कोई कामिनी स्त्री का किसी कामि पुरुष को रात्रिशयन के लिए निषेध मुख से निमन्त्रण दिया गया है। वो कहती है - हे कामान्ध ! यहा पर मेरी सास सोती है। यहा मैं सोती हुं। इसलिए आप दिन में ही देख लो क्योंकि रात की अन्धेरे में मेरे शय्या पर अथवा मेरे सास के शय्या पर गिर मत जाना।

यहा वाच्यार्थ निषेध रूप है किन्तु प्रतीयमान अर्थ विधिरूप है। अर्थात् नायिका के कहने का यह उद्देश्य है कि नायक उस शय्या पर न जाये जहा मेरी सास सोती है, और मेरी शय्या पर आ जाय। इसलिए दिन में ही ये सब दिखाती है।

ग. वाच्य विधिरूप और प्रतीयमान अनुभयरूप

व्रज ममैवैकस्या भवन्तु निःश्वासरोदितव्यानि।
मा तवापि तया विना दाक्षिण्यहतस्य जनिषत॥

हे प्रिय ! अब तुम उसके साथ ही रमण करो। इसमें मुझे अकेले रोना होगा। यदि तुम उसके पास न जाते हो तो तुम्हे और उसको भी रोना होगा। आप दोनों के रोने से मेरा अकेले रोना ही उचित होगा।

इस पद्य में वाच्यार्थ 'ब्रज' (दूसरी नायिका के साथ रमण करो) विधिरूप है। किन्तु प्रतीयमान अर्थ के रूप से विद्यमान अर्थ न ही विधिरूप है, न ही निषेधरूप है। नायिका कोप के कारण बोलती है कि आप उसके साथ ही रमण करो, किन्तु वास्तव में नायिका की यह इच्छा नहीं है। इसलिये यहां प्रतीयमान अर्थ में न ही रमण करने के लिये निषेध है, न ही निषेध का अभाव है।

घ. वाच्य प्रतिषेधरूप और प्रतीयमान अर्थ अनुभयरूप

प्रार्थये तावत् प्रसीद निवर्तस्व मुखशशिज्योत्स्नाविलुप्ततमोनिवहे।
अभिसारिकाणां विघ्नं करोष्यन्यसामपि हताशे॥

प्रार्थना करता हूँ प्रसन्न हो लौट आओ (मेरे घर आ, या हम दोनो तेरे घर चलें), अपने मुखचन्द्र की चाँदनी से अन्धकार को दूर करनेवाली, तुम दूसरी अभिसारिकाओं के भी प्रेमाकर्षन में विघ्न डालती हो।

यहा 'निवर्तस्व' (लौट आओ) इस कथन से गमन निषेध रूप वाच्य है। इस श्लोक में नायिका के प्रति कहा गया है कि तुम अपने मुखचन्द्र के चाँदनी से अन्धकार को दूर कर सकती हो, इस मुखचन्द्र से अन्य अभिसारिकाओं को भी विघ्न करती हो। क्योंकि तुम अपनी सौन्दर्य से सबको मोहित करती हो। यहा नायिका के प्रति नायक का चाटूक्ति प्रतीत होता है। यहा लोचन व्याख्या के अनुसार लौट आओ अथवा मेरे घर आ, या हम दोनों तेरे घर चलें, ये प्रियतम का चाटुक्ति है। इसलिए इस पद्य में वाच्यार्थ प्रतिषेध और प्रतीयमान अर्थ अनुभय रूप है।

ङ. वाच्य एक विषय और प्रतीयमान अनेक विषय

कस्य वा न भवति रोषो दृष्ट्वा प्रियायाः सव्रणमधरम् ।
सभ्रमरपद्माघ्राणशीले वारितवामे सहस्वेदानीम्॥

अपनी प्रेयसी का क्षतयुक्त अधर को देखकर किस पुरुष को क्रोध नहीं होगा इसलिए भ्रमरयुक्त कमल पुष्पको सूंघनेवाली, मेरे द्वारा मना करने पर भी नहीं माननेवाली, तू अपनी अनुचित कर्म का परिणाम को सह लो।

किसी उपनायक के द्वारा उपभोग के समय नायिका के अधर दंशित हुए। यदि नायिका के निकट आत्मीय ने जान लिया तो महान अनर्थ हो जायेगा इसलिए नायिका के सखी ने उसको वचाने के लिए अन्य प्रकार से कहा - हे सखी तुम्हारा क्षतयुक्त अधर को देखकर किसके मन में क्रोध नहीं होगा। मैंने पहले ही तुम्हें मना किया था। अभी इसका फल तुम ही भुगतो।

इस पद्य में एक सखी नायिका को समझाती है ये एक विषय है। किन्तु प्रतीयमान अर्थ अनेक विषय हैं। जैसे नायिका के पति को तुम्हारा प्रियतमा भ्रमरयुक्त पद्म को सुंग लिया है। उस भ्रमर ने उसके अधर का दंशन किया है। इसलिए उसको देखकर तुम अन्यथा चिन्ता न करना। नायिका के सपत्नी के लिए ये अर्थ है कि नायिका को देखकर उसका उपहास न करें। तथा उपनायक के लिए ये अर्थ है कि तुमको ऐसे अधर दंशन नहीं करना चाहिए था। यह तो पहली वार था इसलिए किसी भी तरह वच गया और यदि फिर से एकवार हो गया तो इसका संरक्षण आपको ही करना होगा। इसलिए सावधानी से उस नायिका का उपभोग करना जिससे पुनः अधर में क्षत न हो जाय।

इस प्रकार से प्रतीयमान का वाच्य से अत्यन्त भेद है इस विषय का प्रतिपादन किया गाया है।

धन्यवाद